हिन्द स्वराज का पुनर्पाठ और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा

हिलाल अहमद

हिलाल अहमद युवा राजनीतिक विश्लेषक हैं। विकासशील समाज अध्ययन केन्द्र में फैलो। इस्लाम एवं आधुनिकता एवं प्रतीकों की राजनीति पर इनके कार्यों को काफी सराहा गया है। हिन्द स्वराज के संदर्भों को छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा से जोड़ कर एक गहरी अंतर्दृष्टि से कार्य कर रहे हैं।

हिन्द स्वराज (एक पुस्तक जो गांधी ने 1909 में लिखी थी) और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (एक जनांदोलन जो 1980 के दशक में मध्य प्रदेश में उपजा, परवान चढ़ा और 1990 के दशक के अंत तक आते आते छत्तीसगढ़ में विलुप्त हो गया) के बीच के सम्बंधों को दो अलग अलग नजरियों से देखा जाता है।

पहला नजरिया– जो कि मेरे ख्याल से विवरणात्मकता के बुखार से पीड़ित है– हिन्द स्वराज और मुक्ति मोर्चा के सम्बंधों को घटनाओं के विवरणों के द्वारा दर्शाने की कोशिश करता है। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के द्वारा लड़ी जाने वाली विभिन्न लड़ाइयों के हर एक दिन का लेखा जोखा तैयार करके हमें बताया जाता है कि आंदोलन के कई पहलुओं पर गांधी और मार्क्स के खयालातों की झलक साफ मौजूद है। पर इन कोशिशों में राजनीतिक विचारों एवं राजनीतिक व्यवहारों के बीच के आपसी रिश्ते प्रायः धूमिल हो जाते हैं और आंदोलन का एक नीरस विवरण बच जाता है।[1]

हिन्द स्वराज और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के सम्बंधों को देखने के दूसरे नजरिये को 'सिद्धांत-अमल' नजरिया कहा जा सकता है। हमें यह बताया गया है कि किस तरह नियोगी का आंदोलन दरअसल हिन्द स्वराज जैसी राजनीतिक कृतियों का एक साक्षात मूर्त स्वरूप था। इस तरह गांधी का सिद्धांत और नियोगी का व्यवहार एक ऐसे सिद्धांत मीटर की ओर इशारा करते हैं जो बता सकता है कि जो कुछ भी हिन्द स्वराज में लिखा है, वह सिद्धांत है और जो कुछ नियोगी ने किया वह उस सिद्धांत का राजनीतिक व्यवहार। आंदोलन को समझने का सबसे सटीक माध्यम यही है कि हिन्द स्वराज के सिद्धांत और मुक्ति मोर्चा की गतिविधियों के बीच समानताएं देखी जायें। इस तरह हमें बताया गया है कि मौजूदा विचारधाराओं के धरातल पर नियोगी कहां फिट हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में नियोगी या तो एक नव मार्क्सवादी की छवि के साथ पेश किये जाते हैं जोकि गांधीवाद में

विश्वास रखते थे या फिर नियोगी को एक ऐसे गांधीवादी की संज्ञा दी जाती है जोकि थोड़ा बहुत मार्क्सवादी भी था।[2]

मेरा मत है कि इस तरह का साहित्य मोटे तौर पर उल्लेखनीय है। इस नजरिये से देखने पर नियोगी के विचारों की विशिष्टता उजागर की जा सकती है और भारत में राजनीतिक विचारों के विमर्श की परिधि का भी विस्तार हो सकता है। लेकिन इसके बावजूद इस तरह का साहित्य हमें यह नहीं बताता कि किन विशेष पारिस्थितियों में हिन्द स्वराज जैसी कृति मुक्ति मोर्चा जैसे आंदोलन के लिए प्रासंगिक हो जाती है। दूसरे शब्दों में कहें तो हम पाते हैं कि हिन्द स्वराज का राजनीतिक पठन इस तरह के विमर्श में कोई स्थान नहीं पाता।

प्रस्तुत लेख इन दोनों मॉडलों से पृथक जाकर हिन्द स्वराज के राजनीतिक आत्मसातीकरण को देखने की एक छोटी सी कोशिश है। मैं मूलतः दो प्रश्न उठा रहा हूं:

1. किस प्रकार से हिन्द स्वराज एक राजनीतिक स्रोत के रूप में परिवर्तित कर दी जाती है ताकि न्याय/अन्याय, मुक्ति/बंधन और अधिकार/सम्मान जैसी अवधारणाओं की भाषा में आंदोलन का वर्तमान पिरोया जा सके?

2. कैसे यह अवधारणीकरण की प्रक्रिया, जिसके जरिये आंदोलन अपना एक तार्किक वैचारिक आधार बनाना है, राजनीतिक व्यवहारों में बदल जाती है?

मैं छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के मशहूर नारे *'संघर्ष और निर्माण'* को एक संदर्भ बिन्दु के तौर पर लेकर इन प्रश्नों के उददे्श्य पर चर्चा करूंगा। चर्चा का उददे्श्य कतई इन सवालों के निश्चित और ठहरे हुए अर्थों को खोज कर विमर्श को बंद कर देने का नहीं हैं। अपितु यह ऐसी कोशिश है जिसके जरिए राजनीतिक कृतियों और राजनीतिक व्यवहारों के अंतर्सम्बंधों को एकाधिक नजरियों से समझा और देखा जा सकता है। लेख तीन हिस्सों में बंटा हुआ है। पहला हिस्सा, जिसका शीर्षक *हिन्द स्वराज की राजनीतिक क्षमता* हिन्द स्वराज की उन विशेषताओं का अध्ययन है जो इस कृति को विभिन्न आंदोलनों के लिए प्रासंगिक बना देती हैं। लेख का यह हिस्सा हमें उस राजनीतिक स्तर पर ले जाता है जहां नियोगी और गांधी अपने विशिष्ट संदर्भ से कहीं दूर एक दार्शनिक धरातल पर खड़े दिखते हैं। लेख का दूसरा हिस्सा जिसे मैं *संघर्ष से निर्माण– निर्माण से संघर्ष* कहता हूं मुक्ति मोर्चा के नारे 'संघर्ष और निर्माण' की एक विश्लेषणात्मक व्याख्या है। इस हिस्से में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का एक परिचायत्मक इतिहास बताया गया है ताकि संघर्ष और निर्माण के विचार को व्यापक स्तर पर समझा जा सके। लेख का तीसरा और अंतिम भाग जिसे *सिद्धांत का व्यवहार और व्यवहार के सिद्धांत का नया विमर्श* नाम दिया गया है। हिन्द स्वराज और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के रिश्तों को एक अलग तरीके से समझने की कोशिश है।

हिन्द स्वराज की राजनीतिक क्षमता

शुरुआत एक बुनियादी सवाल से करते हैं: हिन्द स्वराज को छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के संदर्भ में कैसे पढ़ें? मैं एंथनी पारेल की पद्धति को थोड़ा फेरबदल कर इस प्रश्न पर बात करने की कोशिश करूंगा, जोकि हमारे इस प्रयास के लिए अत्यंत प्रासंगिक है।[3] पारेल का अनुसरण करते हुए मैं हिन्द स्वराज को दो बिल्कुल विभिन्न संदर्भों में पढ़ता हूं– पहला संदर्भ गांधी का और दूसरा नियोगी का। मैं इस पुस्तक को दो भाषाओं में पढ़ता हूं। पहली भाषा अंग्रेजी है क्योंकि गांधी ने इसी भाषा में इस पुस्तक की रचना की और इसके विचार और भाषा दोनों को 1909 के बाद आने वाले संस्करणों में परिवर्तित या संशोधित नहीं किया। मैं यहां इस विवाद में नहीं जाना चाहता कि अंग्रेजी या गुजराती में से कौन सी हिन्द स्वराज पहले लिखी गयी। इस लेख के उददे्श्य से यह जरूरी है कि हम अंग्रेजी संस्करण

ा को प्रधानता दें क्योंकि अंग्रेजी में लिखने का एक महत्वपूर्ण कारण औपनिवेशिक राज्य और भारत के अंग्रेजी जानने वाले अभिजन के साथ संवाद स्थापित करना था। इस विषय में एंथेनी पारेल द्वारा सम्पादित हिन्द स्वराज को एक संदर्भ ग्रंथ के तौर पर देखा जा सकता है।[4]

हमारे उददे्श्य से हिन्द स्वराज को पढ़ने की दूसरी भाषा हिन्दी है। इसका सीधा कारण है कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के विशेष संदर्भ में हिन्द स्वराज का हिन्दी संस्करण अत्यंत प्रासंगिक है। इसी भाषा में यह पुस्तक छत्तीसगढ़ में जानी गयी और कई मायनों में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के संघर्षो में समा गयी।

अतः मैं हिन्द स्वराज को गांधी की नजर से पढ़ने की कोशिश करता हूं। मैं गांधी को एक राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में समझ कर उन्हें सरकारी गांधी और दार्शनिक गांधी के मौजूदा विमर्शो से बाहर लाता हूं ताकि राजनीति के व्यावहारिक प्रश्नों और राजनीतिक दर्शन के सम्बधों को हिन्द स्वराज के विशेष संदर्भ में समझा जा सके।

एक राजनीतिक कार्यकर्ता के तौर पर गांधी के सामने क्या चुनौतियां थीं? मेरे विचार से हिन्द स्वराज हमें तीन ऐसी चुनौतियों से परिचित कराती है, जो गांधी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण थीं। पहली चुनौती तत्कालीन राजनीतिक मूल्यों पर अपनी स्थिति स्पष्ट करने की थी। यह सवाल सीधे तौर पर राजनीतिक मूल्यों के नैतिक आकलन से जुड़ा था। दूसरे गांधी के लिए यह जरूरी था कि वे 'स्वराज' जैसे प्रचलित विचार पर अपनी समझ को सामने लायें ताकि 'स्वराज के लक्ष्य' जैसी अवधारणाओं पर होने वाली राजनीतिक बहसों को व्यापक सामाजिक विमर्श से जोड़ा जा सके।

गांधी के समक्ष मौजूद तीसरी चुनौती बहुत खास है : राष्ट्रीय आंदोलन के इस दौर में घट रही घटनाओं और व्यक्तियों की भूमिकाओं का आकलन। यह चुनौती अत्यंत सीधी और तात्कालिक है। बंगाल का विभाजन, कांग्रेस की भूमिका, नरमदल गर्मदल के विरोधाभास, क्रांतिकारी राष्ट्रवाद जैसे मुद्दों पर गांधी को सीधे जवाब देने हैं।

यदि हम इन तीनों चुनौतियों को एक साथ रख कर गांधी की नजर से हिन्द स्वराज को पढ़ें तो हम पायेंगे कि गांधी इन चुनौतियों को बहुत सफाई से पाठक के प्रश्नों में बदल देते हैं और फिर सम्पादक के तौर पर इन सवालों का एक क्रमबद्ध जवाब देते हैं। हिन्द स्वराज के 20 अध्याय इस क्रमबद्धता को एक दिलचस्प संरचना प्रदान करते हैं। यदि हम पुस्तक की इस बनावट को ध्यान से देखें तो पायेंगे कि दरअसल सवाल जवाब का यह क्रम एक राजनीतिक कार्यक्रम की सशक्त भूमिका का आधार तैयार करता है।

हिन्द स्वराज के पहले चार अध्याय पाठक और सम्पादक के संवाद को एक ऐतिहासिक संदर्भ प्रदान करते हैं। इन अध्यायों में बंगाल विभाजन, हिन्दू मुस्लिम सम्बंध, और स्वराज के प्रचलित मायनों की चर्चा की गयी है। यदि इन अध्यायों को सूक्ष्मता से देखें तो हम पाते है कि दरअसल इन अध्यायों में गांधी 20वीं सदी के पहले दशक की भारतीय राजनीति पर एक टिप्पणी कर रहे हैं। दूसरे शब्दों में इन अध्यायों का उद्देश्य यह जानना है कि वास्तव में भारतीय राजनीति आखिर है क्या? गांधी के समक्ष दूसरी चुनौती व्यावहारिक थी उन्हें स्वराज के प्रचलित और खोखले मायनों की आलोचना करते हुए उन संरचनात्मक परिवर्तनों की दार्शनिक व्याख्या करनी थी जोकि औपनिवेशिक आधुनिकता के चलते भारत में एक विशिष्ट भारतीय आधुनिकता का निर्माण कर रहे थे। यह आसान काम नहीं था। आखिरकार गांधी स्वयं इस आधुनिकता में जी रहे थे और कई अर्थों में उनका अपना राजनीतिक दृष्टिकोण (विशेष कर उनके दक्षिण अफ्रीका के प्रयोग) आधुनिकता की एक नयी आलोचना पर आधारित था। मजेदार बात यह है कि गांधी की आधुनिकता की आलोचना किसी भी तरह से न तो पुरातनपंथी थी और न ही रूढ़िवादिता से ग्रस्त थी। इसके विपरीत गांधी आधुनिकता को पश्चिमी सभ्यता के मूल आधारों से पृथक करके देख रहे थे। उनके लिए पश्चिमी सभ्यता और आधुनिकता दो अलग अलग

अवधारणाएं थीं। इसी कारण उनकी आलोचना महज पश्चिम विरोध न होकर उन दार्शनिक आधारों का विरोध थी जिन पर औपनिवेशिक ढांचे का वैचारिक तर्क टिका था। हिन्द स्वराज में रेल, डॉक्टर और वकीलों पर मौजूद चर्चा हमें यह दिखाती है। गांधी का विरोध वैचारिक भी है और व्यावहारिक भी। गांधी अपने राजनीतिक, दार्शनिक तर्कों को सीधी और स्पष्ट भाषा में रखते हैं ताकि 20वीं सदी की शुरुआत में पनप रही भारतीय आधुनिकता के रोजमर्रा के विमर्श पर सीधे टिप्पणी की जा सके। यहां इस बात का उल्लेख करना जरूरी है कि हिन्द स्वराज भारतीयों की कई श्रेणियों का जिक्र करती है। गांधी यह बात साफ करते हैं कि अंग्रेजी पढ़े लिखे भारतीय और ग्रामीण भारतीयों के बीच एक बहुत बड़ा फर्क है। इसलिए जिस 'राष्ट्र' की बात अंग्रेजी जानने वाला अल्पसंख्यक भारतीय वर्ग करता है उस राष्ट्र की छवि ग्रामीण भारतीय मानस पटल पर बिल्कुल भिन्न है। इसलिए गांधी बार बार असली भारत को जानने का आह्वान करते नजर आते हैं। गांधी एक दूसरे फर्क से भी हमारा परिचय कराते है। यह फर्क है राजनीतिक कार्यकर्ताओं और उन भारतीयों का जो तब तक राष्ट्रीय आंदोलन का हिस्सा नहीं बने थे। इस तरह पुस्तक में पाठक और सम्पादक के बीच एक संवाद चलता है। हम यह पाते हैं कि इस संवाद में पाठक और सम्पादक दोनों अपने को राजनीतिक कार्यकर्ता के तौर पर प्रस्तुत करते हैं और राष्ट्रीय आंदोलन के विस्तार, लक्ष्य और तरीकों पर चर्चा करते हुए 20वीं सदी के भारतीय वर्तमान और भविष्य पर एक सशक्त तर्क का निर्माण करते हैं।

अगले आठ अध्याय (अध्याय 5 से 13) इस राजनीतिक खोज की परिधि को व्यापक करते हैं। आधुनिक सभ्यता की अपनी आलोचना का विस्तार करते हुए गांधी स्वराज के अर्थों को दार्शनिक स्तर पर ले जाते हैं। इन अध्यायों में गांधी दो दिशाओं में बढ़ते नजर आते हैं। पहली दिशा स्वराज और आधुनिक सभ्यता के आलोचनात्मक रिश्तों की ओर जाती है जबकि बातचीत की दूसरी दिशा 'स्वराज' क्या हो जैसे दार्शनिक प्रश्नों की ओर इशारा करती है। इस तरह इन अध्यायों में गांधी भारतीय राजनीति के वर्तमान से आगे जाकर भविष्य की एक दार्शनिक रूपरेखा इंगित करते हैं। परंतु भविष्य की यह रूपरेखा किसी भी तरह से 'यूटोपिया' नहीं है। इसके बरक्स स्वराज कैसा हो? इस बात का खुलासा सशक्त तर्कों द्वारा व्यावहारिक राजनीति के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। गांधी इन अध्यायों में राजनीतिक संघटन का एक सिद्धांत प्रतिपादित करते हैं। इस सिद्धांत के जरिए अल्पकालिक और दीर्घकालीन लक्ष्यों के आधार पर स्वराज प्राप्ति के व्यावहारिक एजेण्डा की चर्चा होती है।

गांधी के इस राजनीतिक संघटन के सिद्धांत के तीन आयाम इंगित किये जा सकते हैं। पहला, गांधी का सिद्धांत इतिहास की धारा बदलने की मानवीय क्षमता को रेखांकित करता है। हम पाते हैं कि गांधी मानवीय सम्मान और आत्मबल के प्रतीकों के माध्यम से एक नये भविष्य के निर्माण का प्रस्ताव रखते हैं। वे कहते हैं *: ''ऐसा मानना कि जो कुछ भी इतिहास में अब तक घटित न हुआ है, वह कभी नहीं हो सकता, मानव के आत्मबल में अविश्वास को दर्शाता है।''*[5] (हिन्द स्वराज पृ. 57)

इस सिद्धांत का दूसरा आयाम इसका संदर्भोन्मुख होना है। गांधी राजनीतिक विरोधियों की क्षमताओं और कर्मियों की बात करते हुए एक व्यावहारिक रणनीति बनाने का आह्वान करते हैं। सविनय अवज्ञा और अहिंसात्मक विरोध इस रणनीति का अहम हिस्सा बताये जाते हैं। विरोध के ये नये तरीके न केवल नैतिक आधारों पर हिंसा पर अहिंसा की विजय को प्रतीकात्मक रूप में साबित करने के लिए उल्लेखित किये जाते है बल्कि गांधी इस नयी रणनीति को तत्कालीन भारत के लिए सबसे उपयुक्त और सम्भव राजनीतिक एजेण्डे के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

गांधी कहते हैं : *''अच्छे नतीजे लाने के लिए अच्छे ही साधन चाहिए। और अगर सब नहीं तो ज्यादातर मामलों में हथियार बल से दयाबल ज्यादा ताकतवर साबित होता है। हथियार में हानि है, दया में कभी नहीं।''*[6] (हिन्द स्वराज/65/715/59) गांधी के इस राजनीतिक संघटन के सिद्धांत की तीसरी विशेषता राजनीतिक प्रतिबद्धता (Political comitmant) के निर्माण से सम्बंधित है। गांधी बहुत

तद्भव

tadbhav.com home page

सीधे शब्दों में कहते हैं कि राजनीतिक कार्यकर्ताओं को राजनीतिक संदेश और गतिविधियों को धार्मिक कर्त्तव्यों के तौर पर देखना चाहिए। इस तरह गांधी धर्म को एक नये सिरे से व्याख्यायित करते हुए राजनीतिक मुक्ति की एक नयी धार्मिक समझ का प्रतिपादन करते हैं। ब्रिटिश शासन का विरोध महज एक राजनीतिक कृत्य के रूप में नहीं बताया जाता बल्कि उसे धार्मिक प्रतिबद्धता के रूप में स्थापित किया जाता है। गांधी हालांकि हिन्द स्वराज में राजनीतिक प्रतिबद्धता के आध्यात्मिक आधारों पर सीधे चर्चा नहीं करते, परंतु स्वदेशी की चर्चा करते हुए वे इसके आत्मसातीकरण का आह्वान करते हैं। बाद के वर्षों में प्रार्थना जैसे कार्यक्रम राजनीतिक प्रतिबद्धता के निर्माण के तौर पर प्रस्तुत किये जाते हैं। इस तरह हिन्द स्वराज के अंतिम पांच अध्याय *क्या है? क्या होना चाहिए?* जैसे प्रश्नों से निकल कर *क्या करें?* जैसे व्यावहारिक प्रश्नों पर पहुंचते हैं।

हमारी यह चर्चा हमें हिन्द स्वराज की राजनीतिक क्षमताओं से परिचित कराती है। इन क्षमताओं के चलते हिन्द स्वराज अपने ऐतिहासिक संदर्भ से बाहर आ जाती है और मुक्त होकर नये तरीके से प्रासंगिक बनती है। मेरे विचार से हम हिन्द स्वराज की चार ऐसी ही क्षमताओं को पहचान सकते हैं।

1. राजनीतिक प्रश्नों को हमेशा व्यापक अवधारणात्मक परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए ताकि विरोध का वास्तविक स्तर, वास्तविक/सम्भव विपक्ष, विरोधी और शोषकों की पहचान हो सके और आंदोलन को जनांदोलन में बदला जा सके।

2. लोगों को संघटित करने के तरीके संदर्भोनुकूल होने चाहिए। विरोधी की क्षमता और कमजोरियों का विश्लेषण करते हुए राजनीतिक एजेण्डा और रणनीति का निर्माण होना चाहिए।

3. राजनीतिक संघटन के लिए जरूरी है कि उसे सर्वोन्मुखी बनाया जाय ताकि समाज के अलग अलग समूह आंदोलन से जुड़ सकें और मुक्ति का व्यापक विमर्श प्रारम्भ हो।

4. राजनीतिक आंदोलनों की सफलता उनमें भाग लेने वाले लोगों की प्रतिबद्धता पर निर्भर होती है। लोगों को प्रतिबद्धता बनाने के लिए जरूरी है कि उद्देश्यों की पवित्रता और राजनीतिक रणनीति की पारदर्शिता कायम रखी जा सके।

संघटन के इस सिद्धांत की व्यापक प्रासंगिकता का प्रश्न सीधे तौर पर आंदोलनों, विशेषकर आजादी के बाद के जनांदोलन में तलाशने की जरूरत है। यही इस लेख का मकसद भी है। बातचीत को आगे बढ़ाते हुए हम अब एक खास संदर्भ पर आते हैं और देखते हैं कि आखिर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा क्या है? और कौन है शंकर गुहा नियोगी?

संघर्ष से निर्माण – निर्माण से संघर्ष

छत्तीसगढ़ सन् 2000 से पहले तक मध्य प्रदेश का एक हिस्सा था। आज छत्तीसगढ़ एक पूर्ण राज्य है जो कि संसाधनों, विशेषकर खनिज सम्पदा से भरपूर होते हुए भी गरीब है। लेकिन यह क्षेत्र राजनीतिक तौर पर कभी गरीब नहीं रहा। राष्ट्रीय आंदोलन और उसके बहुत पहले से ही छत्तीसगढ़ विभिन्न संघर्षों का गढ़ रहा है। वास्तव में इस राज्य का 'नक्सल प्रभावित' होना इस क्षेत्र के रहने वालों के राजनीतिक इतिहास का सशक्त परिचायक है।

हमारी कहानी 1970 के दशक से शुरू होती है। भिलाई स्टील प्लांट (आधुनिक भारत के उन मंदिरों में से एक मंदिर जो कि नेहरू के विकास मार्ग पर चलते हुए आधुनिक भारत के सपनों को ही विकसित कर रहा था) हमारी इस कहानी का एक पात्र है। दूसरा पात्र है इस प्लांट से जुड़े ठेका मजदूर जो मूलतः छत्तीसगढ़ के आदिवासी थे और जो समय के बदलाव के चलते मजदूर बन गये थे। मजदूर ठेका पद्धति के आधार पर ठेकेदारों से सम्बद्ध थे। मजदूरों और भिलाई स्टील प्लांट के मैनेजमेण्ट के

बीच ये ठेकेदार बिचौलियों के रूप में काम करते थे। तकनीकी तौर पर देखें तो ये मजदूर असंगठित मजदूर होने के चलते न तो भिलाई स्टील प्लांट से किसी भी तरह के नियमित वेतन की मांग कर सकते थे और न ही संगठित मजदूरों की स्थापित यूनियनों जैसे अखिल भारतीय मजदूर यूनियन संगठन एवं भारतीय राष्ट्रीय मजदूर यूनियन संगठन के संगठनात्मक ढांचे में फिट हो सकते थे।

ठेका मजदूरों की हालत काफी खस्ता थी। इनका जीवनयापन काम मिलने पर निर्भर था। ऐसा स्वाभाविक था कि काम न मिलने पर वे महीनों बेरोजगार रहें। दूसरी ओर ठेकेदारों के बिचौलियेपन के चलते वे दोहरे शोषण के शिकार भी थे। वास्तव में न्यूनतम मजदूरी जैसे कानून का खुल कर उल्लंघन होता और ठेका मजदूरों को जानवरों की तरह समझ कर उनकी शोषण प्रक्रिया बेरोकटोक चलती रहती।

हमारी कहानी का तीसरा पात्र धीरेश गुहा नियोगी है। जो आगे चल कर शंकर गुहा नियोगी के नाम से मशहूर हुआ। नियोगी 1960 के दशक में भिलाई स्टील प्लांट में एक इंजीनियरिंग प्रशिक्षु के तौर पर भर्ती हुए। वे प्रारम्भ से ही वामपंथी आंदोलन से जुड़े थे। भिलाई स्टील प्लांट में काम करते हुए वामपंथी आंदोलन की गतिविधियों में भाग लेते रहे। नियोगी ने ब्लास्ट फॉरनेसिस एक्शन कमेटी का गठन किया और 1960 के दशक के अंतिम वर्षों में कई हड़तालों में भाग लिया। नियोगी की बढ़ती लोकप्रियता के चलते 1967 में भिलाई स्टील प्लांट ने नियोगी को बर्खास्त कर दिया। नियोगी ने अपने मूल राज्य पश्चिमी बंगाल जाने की बजाए छत्तीसगढ़ क्षेत्र में ही रह कर राजनीतिक कार्यों में भाग लेना शुरू कर दिया। 1970 के मध्य के वर्षों में वे भूमिगत हो गये और वामपंथी सरगर्मियों से जुड़े रहे। इसी काल में वे दल्ली राजहरा (जोकि छत्तीसगढ़ माइंस का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है) आ गये और एक ठेका मजदूर के तौर पर काम करना शुरू कर दिया।

इन तीनों पात्रों भिलाई स्टील प्लांट, ठेका मजदूर और नियोगी का आपसी रिश्ता छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में कैसे बदल गया? यह जानने के लिए हमें 1977 में पनप रहे मजदूर असंतोष को ध्यान से देखना होगा। इस समय तक आते आते ठेका मजदूर थोड़ा बहुत संगठित होना शुरू हो चुके थे। भले ही यह संगठन बेहद जर्जर और तात्कालिक था, परंतु विरोध की एकता इन बिखरे हुए मजदूरों को एक साथ लड़ने की प्रेरणा दे रही थी। यही कारण था कि ठेका मजदूरों ने मार्च 1977 में एक बड़ी हड़ताल करके मजदूरी बढ़ाने की मांग की। इस संगठनात्मक पहल को नियोगी ने आगे बढ़ाया और इस हड़ताल के बाद छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का निर्माण हुआ।

छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने दो मुख्य मांगें उठायीं। पहला मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी मिले ताकि उनमें और संगठित मजदूरों के बीच का मौजूदा अंतर समाप्त हो सके। दूसरे, काम उपलब्ध न होने की स्थिति में भी ठेका मजदूरों को नियमित मजदूरों की तरह ही वेतन का भुगतान किया जाय। इस तरह के वेतन को फाल बैक वेतन कहा गया।

मई 1977 तक आते आते के भिलाई स्टील प्लांट के साथ छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की बातचीत शुरू हुई। प्रारम्भिक बातचीत में भिलाई स्टील प्लांट ने इन दोनों मांगों को मान लिया परंतु कोई भी ठोस फैसला नहीं लिया गया। ऐसी उम्मीद की गयी कि मजदूरों का यह संगठन कुछ ही दिनों में अपने आप खत्म हो जायेगा और ठेका मजदूरी की पुरानी प्रथा बरकरार रहेगी परंतु भिलाई स्टील प्लांट की आशा के विपरीत हुआ। इसके बिल्कुल उल्टा छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के नेतृत्व में मजदूरों ने मई 1978 के अंतिम सप्ताह में हड़तालों का नया सिलसिला शुरू कर दिया। भिलाई स्टील प्लांट ने पहले तो मजदूरों को डरा धमका कर हड़ताल खत्म कराने की कोशिश की, परंतु जब इससे काम नहीं बना तब एक दिन 1977 को पुलिस कार्रवाई से हड़ताल तोड़वाने की कोशिश की गयी। नियोगी के नेतृत्व में मजदूरों ने पुलिस कार्रवाई का शांतिपूर्वक विरोध किया। यही नहीं अगले दिन यानि 02 जून 1977 को एक बड़ी रैली का आयोजन किया गया। भिलाई स्टील प्लांट ने इस रैली को एक चुनौती

के तौर पर लिया और इस बार सशस्त्र पुलिस कार्रवाई का सहारा लिया गया। 2 जून को नियोगी को गिरफ्तार कर लिया गया और दिल्ली राजहरा क्षेत्र में पुलिस ने निहत्थे मजदूरों पर गोलीबारी की। इस घटना में 11 मजदूर जिनमें कई महिलाएं एवं 7 वर्ष का एक बच्चा भी शामिल था, मारे गये।

पुलिस फायरिंग की यह घटना एक राष्ट्रव्यापी समाचार बन गयी। राष्ट्रीय स्मृति में इमरज. ेन्सी पहले से ही एक विमर्श के तौर पर स्थापित थी। ऐसे में निहत्थे मजदूरों पर पुलिस फायरिंग को नागरिक स्वतंत्रता के पक्षधर संगठनों ने संवैधानिक अधिकारों की अवहेलना के तौर पर प्रस्तुत किया। परिणामस्वरूप एक राष्ट्रव्यापी दबाव बनना शुरू हुआ और भिलाई स्टील प्लांट को ठेका मजदूरों की मांगों को मानना पड़ा। जुलाई 1977 में पहली बार फालबैक वेतन का भुगतान हुआ। इसके साथ ही बोनस और दूसरे भत्ते भी दिये गये। हालांकि नियोगी को सितम्बर 1977 में रिहा किया गया। यह छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की पहली लड़ाई थी जिसमें 11 मजदूरों ने अपनी जान दी परंतु यह ठेका मजदूरी की पहली विजय भी थी।

इस कामयाबी को अन्य ट्रेड यूनियनों की तरह मजदूरों की जीत बताने की बजाय छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने अपने संघर्ष को व्यापक करने की शुरुआत की। वास्तव में मजदूरों को मिले इस आकस्मिक वेतन लाभ और भत्तों को भिलाई स्टील प्लांट की रणनीति के तौर पर देखा गया। 1981 में प्रकाशित एक साक्षात्कार में नियोगी ने इस घटना का जिक्र करते हुए बताया कि फालबैक वेतन और घर बनाने के लिए दिये गये भत्तों ने मजदूरों की घरेलू अर्थव्यवस्था को दो तरह से प्रभावित किया। पहला उनका मन काम करने से हटने लगा और वे काम से भागने लगे। दूसरा अतिरिक्त वेतन का इस्तेमाल शराब खरीदने में होने लगा। इस तरह मजदूरों का सामाजिक, आर्थिक ह्रास शुरू हो गया।[7] इन दो अनुभवों से निपटने के लिए छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने एक नयी रणनीति अपनायी। पहला सामाजिक सुधार कार्यक्रम की शुरुआत और दूसरा, क्षेत्र और राज्य में चल रहे अन्य मजदूर और किसान आंदोलनों से सम्बंध स्थापित करना। इस रणनीति का ही नाम *'संघर्ष और निर्माण'* पड़ा।

नियोगी ने अपने विभिन्न लेखों और साक्षात्कारों में संघर्ष और निर्माण की इस राजनीति का उल्लेख किया है। नियोगी के अनुसार *"भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन अर्थवाद में उलझे रहे हैं और उन्होंने मजदूरों के सम्मान का सवाल नहीं उठाया।"* [8] इसी प्रकार ट्रेड यूनियनों ने मजदूरों की सामाजिक जिन्दगी में होने वाली घटनाओं को भी सूक्ष्मता से नहीं देखा। इस तरह मजदूरों में आंदोलनों के प्रति राजनीतिक प्रतिबद्धता का निर्माण नहीं हो सका और सामूहिक अमल की सारी सम्भावनाएं समाप्त हो गयीं। नियोगी वामपंथी पार्टियों की भी आलोचना करते हैं। उनके अनुसार भारतीय मार्क्सवादी पार्टियां भारत की परिस्थितियों के अनुकूल संशोधित मार्क्सवाद लेनिनवाद का निर्माण नहीं कर सकीं। इन पार्टियों के नेताओं ने भारतीय सामाजिक संरचनाओं की विशिष्टताओं को नहीं समझा फलस्वरूप भारतीय पूंजीवाद की रचनात्मक आलोचना का निर्माण न हो सका। नियोगी के अनुसार *''मजदूरों की निजी जिन्दगी और उनके समाज के अन्य पीड़ित तबकों से सम्बंध ही भारत में मजदूर शोषणतंत्र की व्यापकता को समझने का एक सार्थक संदर्भ बिन्दु होना चाहिए।"* [9]

इस वैचारिक पृष्ठभूमि में संघर्ष और निर्माण को एक नये रास्ते के तौर पर देखा गया। इसे एक सिद्धांत का दर्जा देते हुए बताया गया कि जनसाधारण को सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया में इस तरह शामिल करना चाहिए ताकि मौजूदा शोषणतंत्र का विरोध हो सके और साथ ही साथ वैकल्पिक समाज के निर्माण की प्रक्रिया भी जारी रहे। दूसरे शब्दों में नियोगी ने छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के जरिए जारी अपने राजनीतिक अमल को सामाजिक सुधार के कार्यक्रमों से सशक्त करने की शुरुआत के तौर पर परिभाषित करना शुरू किया।

यदि छत्तीसगढ़ आंदोलन के इतिहास पर नजर डालें तो हमें संघर्ष और निर्माण के पांच वि. भन्न प्रकार दिखायी दे सकते हैं। ये पांच प्रकार हमें आंदोलन द्वारा अपनायी गयी विभिन्न रणनीतियों

से भी परिचित कराते हैं।

1. श्रम के सम्मान के लिए संघर्ष और वैकल्पिक नीति का निर्माण

जैसाकि हमने देखा है कि फॉल बैक वेतन और बोनस की लड़ाई छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की पहली लड़ाई थी। तब तक छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ महज एक पंजीकृत ट्रेड यूनियन थी। लेकिन जून 1977 के पास छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने अपने को ट्रेड यूनियन की छवि से बाहर निकालना शुरू किया। छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ ने भिलाई स्टील प्लांट की कार्यप्रणाली का अध्ययन प्रारम्भ किया और 1979 में एक वैकल्पिक औद्योगिक नीति का प्रस्ताव भिलाई स्टील प्लांट को दिया।[10] इस वैकल्पिक औद्योगिक नीति के दस्तावेज में न केवल भिलाई स्टील प्लांट के संरचनात्मक ढांचे की आलोचना की गयी बल्कि 'सीमित औद्योगिकीकरण' की बात भी की गयी ताकि श्रम प्रधान तकनीक का विकास हो सके। इसी प्रस्ताव का संशोधित स्वरूप भारत में वैकल्पिक औद्योगिक विकास के विषय में जारी दस्तावेज का आधार बना जिसमें नियोगी ने गांधी के हिन्द स्वराज को 1980 के भारत के औद्योगिक विकास की एक प्रासंगिक आलोचना कहा।[11] इसी समय में यानि 1979-80 में छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ का संगठनात्मक विस्तार हुआ और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की स्थापना हुई। इस तरह श्रम के सम्मान की लड़ाई जो महज ठेका मजदूरों तक सीमित थी विस्तार पाते हुए भारत के औद्योगिकीकरण के रचनात्मक विकल्प की तलाश तक पहुंच गयी।

2. सामाजिक सुधारों के लिए संघर्ष और वैकल्पिक शिक्षा, स्वास्थ्य और तकनीकी संस्थानों का निर्माण

समाज सुधार छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का दूसरा महत्वपूर्ण संघर्ष था। जैसाकि बताया गया कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का मुख्य उद्देश्य मजदूरों की रोजमर्रा की जिन्दगी में बदलाव था। इस बदलाव को मजदूरों की आंदोलन के लिए प्रतिबद्धता के सम्बंध में भी देखा गया। 1978 में आंदोलन ने नशाबंदी का एक व्यापक कार्यक्रम शुरू किया। इस आंदोलन की शुरुआत संगठन के महिला संगठन 'महिला मुक्ति मोर्चा' ने की। महिलाओं ने पुरुष मजदूरों को शराब न खरीदने और न पीने के लिए कई स्तरों पर संघर्ष किया। इस कार्यक्रम में शराब छोड़ने वाले मजदूरों को प्रोत्साहित किया गया जबकि ऐसा न करने वाले मजदूरों का सामाजिक बहिष्कार प्रारम्भ हुआ। इस तरह शराब एक प्रतीक के तौर बहिष्कृत कर दी गयी।[12] शराब विरोध के साथ ही स्वास्थ्य के लिए संघर्ष नामक नयी मुहिम शुरू हुई। आंदा. ेलन ने सार्वजनिक स्वास्थ्य के मसले पर कई गोष्ठियों का आयोजन किया। मजदूरों का स्वास्थ्य एक राजनीतिक प्रश्न के तौर पर उठाया गया और परिणामस्वरूप 1982 तक आते आते 'शहीद अस्पताल' के रूप में पहला मजदूर अस्पताल स्थापित हो गया। अगले कुछ वर्षों में दो स्कूल और एक गैराज की भी स्थापना की गयी। ये संस्थाएं मजदूरों के अपने पैसे द्वारा चलायी जाती थीं इसलिए ये आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर थीं। इस तरह स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे बुनियादी अधिकारों के लिए किये गये संघर्ष ने आत्मनिर्भर अस्पताल और स्कूलों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया।

3. आंदोलन को व्यापक बनाने का संघर्ष और संगठन में पहचानों के आधार पर सहयोगी संगठनों का निर्माण

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा प्रारम्भ से ही मजदूर, किसान, आदिवासियों, दलित, धार्मिक अल्पसंख्यकों एवं महिलाओं के विशिष्ट मुद्दों में दिलचस्पी रखता था। इन तबकों के संघर्षों में एकता लाने की कोशिश आंदोलन के चरित्र को व्यापक कर सकती थी। इसी कारण छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने अपने को एक

वृहद संगठनात्मक ढांचे में परिवर्तित करके कई सहयोगी संगठनों का गठन किया। आंदोलन की यह रणनीति कारगर साबित हुई और परिणामस्वरूप आंदोलन का विस्तार हुआ। सामाजिक सुधार आंदोलन ने जहां इन समूहों में मौजूद आपसी विरोधाभासों को दूर करने में मदद की वहीं भिलाई स्टील प्लांट के विरोध ने मजदूर पहचान को अन्य पहचानों के साथ एक नया समन्वय स्थापित करने का मौका दिया। इसी कारण आंदोलन का तंत्र खासकर नियोगी के जीवित रहने तक आंतारिक कलह से काफी हद तक दूर रहा।

4. मुक्ति के लिए संघर्ष और नये छत्तीसगढ़ की कल्पना का निर्माण

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा को मध्यप्रदेश में चल रही पृथक छत्तीसगढ़ की मांग पर भी अपनी स्थिति स्पष्ट रखनी थी। इसी संदर्भ में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने एक दस्तावेज *'छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का नजरिया'* जारी किया।[13] इस दस्तावेज में छत्तीसगढ़ी की एक व्यापक परिभाषा दी गयी। दस्तावेज के अनुसार छत्तीसगढ़ी वह है जो–

1. छत्तीसगढ़ के भौगोलिक क्षेत्र में ईमानदारी से मेहनत मजदूरी करके जीवन निर्वाह करता है।
2. जो छत्तीसगढ़ की मुक्ति के लिए समर्पित है।
3. जो सामंती शोषण नहीं करता।
4. जो पूंजीवादी व्यवस्था का अंत चाहता है।
5. जो छत्तीसगढ़ का जनवादी विकास चाहता है।
6. जो अंतर्राष्ट्रीय सर्वहारा से भाईचारा रखता है।
7. ऐसा व्यक्ति जो परम्परागत रूप से छत्तीसगढ़ भू भाग का निवासी रहा हो पर अब कमाने खाने के लिए दूसरे प्रांत में बस गया हो और शोषण न करता हो।
8. अन्य राष्ट्रीयताओं के जनसमुदाय में से वे व्यक्ति जो कि छत्तीसगढ़ के औद्योगिक क्षेत्र में ईमानदारी और मेहनत से अपनी जीविका निर्वाह करते हों, साथ ही यहां स्थायी रूप से बसने का इरादा रखते हों और छत्तीसगढ़ के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में श्रद्धा के साथ हाथ बंटाते हों।

यह दस्तावेज छत्तीसगढ़ के दुश्मनों को भी परिभाषित करता है। इस श्रेणी में सामंतवादी (मालगुजार, साहूकार) और अर्द्धसामंतवादी (ठेकेदार, दलाल और नौकरशाह) प्रवृति के लोग आते है *'भले ही वे छत्तीसगढ़ में पैदा हुए हों और छत्तीसगढ़ी बोलते हों।'*

इस दस्तावेज में छत्तीसगढ़ के पिछड़ेपन के कारण भी बताये गये हैं। ये कारण हैं–

1. औपनिवेशिक ताकतों द्वारा थोपा गया आर्थिक ढांचा, औद्योगिक नीति और अंधाधुंध मशीनीकरण।
2. सामंती ग्रामीण अर्थनीति एवं अर्द्धसामंती ठेकेदारी पद्धति।
3. भूमि से कम उत्पादकता।

इस संदर्भ में मुक्ति का क्या अर्थ है? 1981 में दिये एक साक्षात्कार में नियोगी ने इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा था। : *''आज जब जनता जाग्रत नहीं है और यह समझ नहीं पा रही है कि संजय गांधी के रास्ते से मुक्ति मिलेगी या किसी और रास्ते से।... जब व्यापक जनता जाग जायेगी तो परिस्थितियां तय करेंगी कि कौन सा रास्ता लोग अपनायें।''* [14]

इस वक्तव्य से यह स्पष्ट है कि मुक्ति की अवधारणा को परिस्थितियों से जोड़ कर नियोगी एक ऐसे विचार की रचना करते हैं जो छत्तीसगढ़ राज्य के निर्माण या फिर न्यूनतम मजदूरी की लड़ाई से बहुत ज्यादा व्यापक है। मुक्ति की इसी रूपरेखा को अपनाने के चलते छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने

तद्भव

बाद के वर्षों में संसदीय लोकतंत्र में भाग लिया और उनके प्रत्याशी दो बार विधानसभा के लिए भी चुने गये।

5. वैकल्पिक बौद्धिक परम्परा के लिए संघर्ष एवं जनोन्मुख इतिहास की रचना

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का बौद्धिक संघर्ष कई मायनों से अत्यंत उल्लेखनीय है। यह संघर्ष आंदोलन के प्रारम्भिक दौर में शुरू हुआ जब 1979 में *'मितान'* नाम का दो पृष्ठों का एक मजदूर अखबार निकालना प्रारम्भ किया गया। मजदूरों को अखबार में लिखने और अखबार को खरीद कर पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया गया ताकि साक्षरता और सूचना दोनों का प्रसार हो सके। इसी तर्ज पर एक सांस्कृतिक समूह *'नव अंजीर'* की स्थापना की गयी। इस सांस्कृतिक समूह ने आंदोलन के संदेश को नुक्कड़ नाटकों और लोकगीतों के माध्यम से फैलाने की मुहिम शुरू की। 1982 में 'अपना जंगल जानो' नामक कार्यक्रम भी इस प्रयोग की एक कड़ी थी। आंदोलन ने छत्तीसगढ़ से विलुप्त होने वाले पेड़ पौधों को संरक्षित करने के लिए यूनियन ऑफिस के पीछे एक छोटे से जंगल का निर्माण करके दुर्लभ पेड़ पौधों को संरक्षित करने का काम शुरू किया। इसी समय में जन इतिहास लिखने का कार्य भी शुरू हुआ। वीर नारायण सिंह नामक आदिवासी नेता के सम्बंध में जानकारियां एकत्र करने की शुरुआत हुई और अंत में वीर बहादुर सिंह पर एक दस्तावेज भी प्रकाशित किया गया।[15] इस वैकल्पिक इतिहास को जनांदोलन से जोड़ने के लिए हर वर्ष 19 दिसम्बर को वीर नारायण दिवस के रूप में मनाने की शुरुआत की गयी। इस तरह वैकल्पिक बौद्धिक परम्परा का संघर्ष जन इतिहास में परिवर्तित हो गया।

सिद्धांत का व्यवहार और व्यवहार के सिद्धांत का नया विमर्श

संघर्ष और निर्माण के इन प्रयोगों और हिन्द स्वराज के बीच मौजूद सम्बंधों को कैसे देखें? लेख की शुरुआत में हमने मौजूदा मॉडलों की एक सीमितता की ओर इशारा किया था। लेख के इस अंतिम भाग में हम छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा पर हुई चर्चा के संदर्भ में हिन्द स्वराज की राजनीतिक क्षमताओं की संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

मेरा मत है कि हिन्द स्वराज में संघटन के जिस सिद्धांत का प्रतिपादन गांधी करते हैं छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा उस सिद्धांत को अपने व्यवहार से विकसित करता है। इस तरह छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा गांधी के सिद्धांत को एक नये तरीके से व्याख्यायित करता है। हम वास्तव में छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के इतिहास में महज राजनीतिक संघर्षों का लेखा जोखा ही नहीं पाते बल्कि हमारा परिचय एक विशिष्ट सैद्धांतिक विमर्श से होता है जिसमें हिन्द स्वराज को एक राजनीतिक स्रोत के तौर पर समझा गया है।

मैं उन चार बिन्दुओं पर प्रकाश डालना चाहूंगा जो कि लेख के पहले हिस्से में उल्लिखित हैं:

1. मूल की खोज : हम पाते हैं कि हिन्द स्वराज के संघटन सिद्धांत की तर्ज पर ही छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा : छत्तीसगढ़ी कौन? के प्रश्न को अंतर्राष्ट्रीय सर्वहारा की लड़ाई के सम्बधं में देखता है। हिन्द स्वराज का रचनात्मक अनुसरण करते हुए छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा न केवल छत्तीसगढ़ के विरोधियों को पहचानता है बल्कि वह आंदोलन में भाग लेने के लिए *'सच्चे छत्तीसगढ़ का आह्वान भी करता है।'*

2. राजनीतिक रणनीति : हिन्द स्वराज जिस तरह आत्मबल और सम्मान को राजनीतिक मूल्यों के रूप में प्रस्तुत करती है, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा उसी प्रकार परिस्थितियों के अनुकूल रणनीति बनाने के लिए साधनों की पवित्रता पर बल देता है। यही कारण है कि 1979 से लेकर अपने चरमोत्कर्ष तक आंदोलन अहिंसात्मक विरोध का सहारा लेता रहा ताकि भारतीय राज्य की हिंसक प्रवृत्ति का वैकल्पिक

राजनीति के माध्यम से जवाब दिया जा सके।

3. समन्वयकारी नजरिया : हिन्द स्वराज स्पष्ट तौर पर तमाम भारतीयों के मुद्दों को, विशेषकर पहचान समूहों के मुद्दों को राष्ट्रवाद की एक समन्वयकारी समझ में पिरोने की कोशिश करती है। लगभग ऐसी ही स्थिति छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की भी है। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा तमाम पीड़ित शोषित समूहों की एकता की स्थापना इस तरह करता है कि न तो उनके अंदरूनी विरोधाभास आंदोलन के व्यापक लक्ष्य को प्रभावित करें और न ही आंदोलन का चरित्र अलोकतांत्रिक हो सके। इसी कारण आंदोलन न केवल सामाजिक स्तर पर कामयाब हुआ बल्कि उसे चुनावी राजनीति में भी सफलता हासिल हुई।

4. प्रतिबद्धता का निर्माण : हिन्द स्वराज ने जिस तरह धर्म को मुक्ति की राजनीति में बदल कर आंदोलन के प्रति जन प्रतिबद्धता के लिए स्वदेशी को अपनाने की बात कही वैसा ही कुछ छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने भी अपने सामाजिक सुधार कार्यक्रम में करने की कोशिश की। आंदोलन द्वारा शुरू किया गया नशाबंदी कार्यक्रम और 24 घंटे की यूनियन की अवधारणा मूलतः मजदूरों की प्रतिबद्धता निर्माण से ही सम्बंधित थे।

हमारी यह चर्चा जहां एक ओर यह दिखाती है कि हिन्द स्वराज और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में सीधा सम्बंध है, वहीं यह भी स्पष्ट होता है कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा कई अर्थों में हिन्द स्वराज से काफी पृथक राजनीतिक धरातल पर पहुंचता है। आंदोलन का यह तर्क कि *मार्क्सवाद का भारतीयकरण होना चाहिए* इस तथ्य का परिचायक है। लेकिन इसके साथ ही साथ हम यह भी पाते हैं कि आंदोलन वर्ग केन्द्रित मार्क्सवाद का अनुसरण नहीं करता अपितु वर्ग, जाति, लिंग, धर्म और जातीयता के आधारों को मिला कर एक नयी सैद्धांतिक रचना का निर्माण होता है। इस पूरी प्रक्रिया में हिन्द स्वराज एक सशक्त राजनीतिक स्रोत के तौर पर पहचानी जाती है। इस तरह राजनीतिक व्यवहार और राजनीतिक सिद्धांतों का संवाद नये राजनीतिक विचारों को जन्म देता है। मेरा यह तर्क है कि विचारों की इस प्रक्रिया को न तो बिल्कुल विशिष्ट बता कर राजनीतिक सिद्धांत के निरंतर चलने वाले विमर्श तक सीमित करना चाहिए और न ही नये विचारों को गांधीवादी या मार्क्सवादी कह कर उनकी मौलिकता को धूमिल करना चाहिए। मेरा मत है कि हमें एक बीच का मार्ग अपनाना चाहिए जिसके लिए जरूरी है कि भारत की जमीनी राजनीति से उपजे विचारों और व्यवहारों का क्रमबद्ध अध्ययन हो। यही सम्भव तरीका है हिन्द स्वराज जैसी कृतियों के संदर्भयुक्त पुनर्पाठ का।

टिप्पणियां एवं संदर्भ

1. इस सम्बंध में दो तरह के साहित्य का उल्लेख किया जा सकता है। पहली तरह का साहित्य पी.यू.डी.आर. की तरह के नागरिक स्वायत्तता समर्थक समूहों द्वारा प्रकाशित है। इस तरह के साहित्य का मूल उद्देश्य क्योंकि घटनाओं की समग्रता का प्रस्तुतिकरण होता है, इसलिए राजनीतिक विचारों की बात जानबूझ कर मुखर नहीं की जाती। देखें पी.यू.डी.आर. रिपोर्ट, Shanker Guhe Niyogi and the Chahtisgarh People's Movement (1991)। दूसरी तरह का साहित्य स्वयंसेवी संस्थाओं के द्वारा प्रकाशित है। ऐसे साहित्य में मुक्ति मोर्चा सामाजिक अमल (social action) के एक टाइप के तौर पर पेश किया जाता है। हमें बताया जाता है कि इस तरह के Civil Society Movement दरअसल नागरिक समाज के अभिन्न अंग हैं और इसी कारण राज्य के क्षेत्र से बाहर 'कल्याणकारी' कार्यों में लगे हैं। इस तरह के लेखों में आंदोलन की विचारधारा को पीछे धकेल कर उसके कार्यों को एक फंतासी की तरह दिखाया जाता है। देखें : Chandhake, Neera 2000 Chhatisgarh mukti Movement, Memio, PRIA, New delhi
2. इस विषय में ए.के. रॉय का लेख उल्लेखनीय है। देखेंः रॉय ए.के. वामपंथ की तीनों धाराओं से अलग थी चौधारा, सद्गोपाल, अनिल, नम्र, श्याम बहादुर (सं.) *संघर्ष और निर्माणः शंकर गुहा नियोगी एवं उनके नये भारत का सपना,* राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1993
3. इस विषय में विस्तार के लिए देखें : Parel, Anthony, J. Introduction in Parle, Anthony J.

(ed.) *Gandhi Hind Swaraj and other Writings,* Cambridge University Press, Cambridge (2003/2007)

4. उपरोक्त
5. देखें : हिन्द स्वराज का अंग्रेजी संस्करण (अनुवाद लेखक द्वारा) Gandhi, MK(1909), *Hind Swaraj or Indian Home Rule,* Navjivan Publication, Ahmedabad.
6. उपरोक्त
7. देखें : कामरेड नियोगी से ट्रेड आंदोलन पर दो बातचीत (1993) शहीद शंकर गुहा नियोगी यादगार समिति, लोक साहित्य परिषद्, दल्ली राजहरा।
8. उपरोक्त
9. उपरोक्त
10. देखें : नियोगी, शंकर गुहा (1993), आखिर दल्ली राजहरा की लोहा खदानों की समस्या क्या है? सद्गोपाल नम्र (सं.) पूर्वोक्त
11. नियोगी, शंकर गुहा (1993), वैकल्पिक औद्योगिक नीति, सद्गोपाल, नम्र (सं.) पूर्वोक्त
12. नियोगी साक्षात्कार, पूर्वोक्त संदर्भ
13. छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा का नजरिया, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा दस्तावेज
14. नियोगी साक्षात्कार, पूर्वोक्त संदर्भ
15. देखेंः नियोगी शंकर गुहा (1993) मुक्ति कर्मियों के प्रेरणास्रोत वीर नारायण सिंह, सद्गोपाल, नम्र (सं.) पूर्वोक्त